ISSN 0973-8541, HUMANITIES AND DEVELOPMENT, VOL.18, NO.2, JULY-DEC,2023 /64

# ''बौद्ध साहित्य में महिलाओं की स्थिति''

निशा सरोज–शोध छात्रा एवं डॉ0 ऋचा पाठक (असिस्टेंट प्रोफेसर, प्राचीन इतिहास विभाग)
(का० सु० साकेत स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अयोध्या
https://doi.org/10.61410/had.v18i2.146

**सारांश :–**

स्त्रियों की दशा में युग के अनुरूप परिवर्तन होता रहा है। बौद्ध ग्रन्थों के माध्मय से हमें महिलाओं की राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक स्थिति के बारे में जानकारी प्राप्त होती है।[1] धर्मकीर्ति के अनुसार गीता में स्त्री वर्ग को पापयोनि कहा गया। ऐसी स्थिति में बौद्ध धर्म का उदय स्त्रियों की स्वतंत्रता का महत्वपूर्ण कारक बना।

**शब्द संकेत :–** भिक्षुणी, ब्रह्मचारिणी, अध्यात्मिक, उत्तरवैदिक, अधिकारहीनता, धर्मकीर्ति।

**प्रस्तावना :–**

महात्मा बुद्ध ने प्रारम्भ में स्त्रियों को संघ–प्रवेश की आज्ञा नहीं दी थी, परन्तु आनन्द के कहने पर उन्होंने आज्ञ दे दी, थी और भिक्षुणियों के लिए पृथक संघ बनाने की व्यवस्था की।[2] बौद्ध भिक्षुणी संघ की स्थापना भिक्षु संघ के साथ नहीं हुई थी अपितु बुद्ध के ज्ञान प्राप्ति और भिक्षु संघ की स्थापना के कुछ समय पश्चात हुई थी।[3] बुद्ध ने जब स्त्रियों को संघ में प्रवेश देना प्रारम्भ किया तो उन पर भिक्षुओं का कहा नियन्त्रण था। उन्हें उपदेश सुनने के उद्देश्य से भिक्षुओं के निकट जाना होता था।[4] बुद्ध ने आनन्द[5] से कहा अब धर्म चिरस्थायी नहीं रह सकेगा। परन्तु यह कटु आलोचना स्त्री के कामिनी रूप की है। बुद्ध[6] ने अपने अनुयायियों और गृहस्थियों को यह उपदेश दिया था कि ''अपनी स्त्रियों को स्वयं का मित्र समझो व उन पर विश्वास रखो व उनका सम्मान करो और वस्त्राभूषण प्रदान करो।'' बुद्ध ने कहा निर्वाण की प्राप्ति न केवल ब्राह्मण को अपितु सभी मनुष्यों और स्त्रियों को भी प्राप्त हो सकती है।[7] बौद्ध ग्रन्थों मे खेमा[8] भद्रकुण्डलकेशा, [9] सुभा, सुमेधा, अनोपमा, सुभद्रा, उपरा तथा उदुम्बरा[10] आदि अनेक विदुषी महिलाओं के उल्लेख हैं।[11] तथागत ने भिक्षुणी संघ की स्थापना कर सर्वप्रथम अपनी मौसी प्रजापति गौतमी को संघ में प्रव्रजित किया जिसका उल्लेख विनय पिटक के चुल्लवग्ग में मिलता है।[12] भिक्षुणी संघ में किसी भी प्रकार के भेदभाव की भावना उत्पन्न न हो, इसीलिए बुद्ध ने महाप्रजापति गौतमी व यशोधरा जैसी महारानियों और प्रकृति जैसी मेहतरानियों (चाण्डालकन्या) को संघ में प्रवज्या देने के उपरान्त एक ही पक्ति में बैठा दिया था। बौद्ध साहित्य का थेरीगाथा ग्रन्थ, नारी स्वतंत्रता को प्रकट करने वाला प्रथम ग्रन्थ है।[13] संयुक्त निकास के अनुसार गुणवती पुत्री को पुत्र से भी अच्छा समझना चाहिए।[14] अनेक स्त्रियाँ बौद्ध संघ में प्रविष्ठ हुई, और उनकी शिक्षा को प्रोत्साहन मिला। जातकों में भी कुछ बौद्ध कन्याओं का उल्लेख मिलता है जो दार्शनिक बाद–विवाद में भाग लेती थी।[15] गौतम बुद्ध के समय में भी परिवार में पत्नी की पर्याप्त प्रतिष्ठा थी।[16] असातमत्त जातक[17] से ज्ञात होता है कि एक सुशिक्षित आचार्य अपनी एक सौ बीस वर्षीय बूढ़ी माता को अपने हाथ से नहलाता, खिलाता और उसकी सेवा करता था। ज्येष्ठ भ्राता अपनी बहनों का भरण–पोषण तथा संरक्षण प्रायः पिता तुल्य ही करते थे, पिता के न रहने पर कन्या को बड़े भाई के संरक्षण में रहना चाहिए।[18] अनेक स्त्रियाँ शिक्षिका बनकर अध्यापिकाओं का जीवन व्यतीत करती थी, वे अपना शिक्षण कार्य उत्साह व लगन के साथ निष्ठापूर्वक सम्पन्न करती थी।''[19] थेरीगाथा में लगभग 50 ऐसी थेरियों (स्थिविर–स्त्रियों) का उल्लेख है जो कवित्रियाँ थी। इनमें से 32 ऐसी थी जो आजीवन ब्रह्मचारिणी रही थी और 18 ने वैवाहिक जीवन के पश्चात् भिक्षुव्रत ग्रहण किया।[20] उनमें

सुमेधा, सुभा, अनोपमा के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।[21] महानारद कश्यप जातक[22] में अंग नामक राजा के पास केवल एक कन्या थी जिसके प्रति राजा का पुत्र से भी अधिक असीम प्रेम था। महाबेस्सन्तर जातक[23] में कष्नारजिनी नाम की कन्या अपने भाई जालि के समान ही अनुराग पाती थी। सूची जातक[24] में वर्णन है कि तरुण कुमारी अपने पिता को ताड़ के पंक्षे से हवा कर रही है, जबकि वह भेाजन करके शय्या पर आराम की मुद्रा में लेटे थे। राजगृह के सम्पत्तिशाली सेठ की पुत्री भद्राकुण्डकेशा अपनी विद्या और ज्ञान से सबाके आकृष्ट करती थी।[25] खेमा की विद्वता की प्रशंसा सुनकर कोशल नरेश प्रसेनजित स्वयं उसकी सेवा में गये और अनेक दार्शनिक विषयों पर विचार–विमर्श किया।[26] संयुक्त निकाय के अनुसार भिक्षुणी सुक्का[27] वाग्मिता में अत्यन्त प्रवीण थी। महाउम्मग जातक[28] में उदुम्बरा और अमरा भली–भाँति लिखना–पढ़ना जानती थी। राजा रुद्रायन की पत्नी चन्द्रप्रभा प्रसिद्ध नृत्यांगना थी।[29] शिक्षमाणा[30] और उपाध्याया[31] शब्दों के अनुसार कहा जा सकता है कि स्त्री शिक्षा से ब्राह्मण आडम्बरों से मुक्ति प्राप्त कर चुकी थी और वे शिक्षक और उपाध्याय (धार्मिक गुरु) बन सकती थी। बौद्ध ग्रन्थों के अनुसार स्त्री उपाध्यायिकाएँ होती थी।[32] अवदानशतक में पद्मावती नामक एक उपाध्यायिका का उल्लेख मिलता है।[33] पाणिनी ने महिला–शिक्षणशाला (छन्नीशाला) का भी उल्लेख किया।[34] पाणिनी के अनुसार जो स्त्रियाँ अध्यापन कार्य करती थी वे 'आचार्य' और 'उपाध्याया' कहलाती थी।[35]

रतिलाल का मत है[36] नृत्य, गयन में दक्षता प्राप्त करना प्राचीन नारी का सद्गुण माना जाता था। बनमाला भावलकर[37] के अनुसार वैदिक काल से नृत्य संगीत आदि कलाओं के प्रति स्त्रियों की विशेष रुचि रही है। बुद्ध कहते हैं कि सभी जगह पुरुष पण्डित नहीं होता, अनेक स्थितियों में स्त्रियाँ भी पण्डित होती हैं।[38] भिक्षुणी सुमंगलमाता[39] कहती हैं कि पति मुझे उन छात्रों से से भी तुच्छ समझाता है जिन्हें वह जीविका के लिए बनाता है और अन्त में प्रव्रजति होकर वह सभ सांसारिक बन्धनों से मुक्त हो गयी और सुखपूर्वक ध्यान लगाते हुए जीवन यापन करने लगी। डॉ0 मदन मोहन सिंह[40] की मान्यता है कि तक्षशिला जैसा विश्वविद्यालय केवल छात्रों के लिए ही निश्चित था। बाल–विवाह की परम्परा से यह तथ्य मिलता है कि नारियाँ उच्च शिक्षा से वंचित ही रहती थी।[41] बौद्ध समाज में भिक्षुणियाँ स्वयं को बुद्ध के साथ अपना सम्बन्ध प्रकट करती थी।[42] स्वयं बुद्ध ने स्त्री की निर्माण–प्राप्ति की योग्यता को स्वीकार किया और पुरुषों से अधिक योग्य मानते थें।[43] उनका संघ प्रदेश की माता–पिता अथवा पति की आज्ञा के अनन्तर ही सम्भव था।[44] पति और पतिकुल सेवा उनका पुनीत कर्तव्य था।[45] पत्नी के रूप में दासी भार्या ही प्रशस्ति थी।[46] जातक कथाओं में वर्णित है कि श्रावस्ती के भूमिपति पर डाकुओं ने आक्रमण किया डाकू सरदार उसकी पत्नी पर मोहित हो गया परन्तु स्त्री ने कहा कि यदि तुम मेरे पति को मारोगे तो मैं विष पी लूंगी।[47] जातक कथा में एक यक्ष साध्वी से कहता है कि या तो मेरी इच्छा पूरी कर या मृत्यु स्वीकार कर तो वह साध्वी मृत्यु स्वीकार करती है।[48] धन का लालच देने पर स्त्री पतिव्रता से विलित नहीं होती हैं।[49] राजपत्नी मृदुलक्षण[50] के सतीत्व रक्षा का वर्णन मिलता है। पति के संकट में केवल पत्नी ही उसके साथ रहती है, क्योंकि उसे पति के समान पृथ्वी के चारों कोनों पर कोई प्रिय नहीं मिल सकता है।[51]

बौद्ध काल में कुछ स्त्रियाँ दो विवाह[52] भी कर लेती थीं। इसी से जातक कथाओं में नारी को हेय भी माना गया है। बोधिसत्व ने निष्कर्ष निकाला कि उस जनपद को धिक्कार है जिसका संचालन स्त्रियाँ करती हैं।[53] अनभिरत जातक[55] में गुरु ने भार्या के दोष से दुखी शिष्य को उपदेश दिया है कि स्त्रियाँ लोक में नदी, मार्ग, बाजार, सभा और मदिरालय की भांति सबके लिए होती हैं। ब्रह्मदत्त की पत्नी एक आमात्य से अनुचित सम्बन्ध रखती थी, तब बोधिसत्व ने राजा को समझाते हुए भी यही बात कही कि स्त्री सर्वगामी होती हैं, अतः वे क्षम्य हैं।[55] उच्छग जातक में भी इसी की पुष्टि होती है कि

एक स्त्री के पति, पुत्र और भाई बन्दी हुए, राजा ने कहा कि इनमें से एक छोड़ देंगे, तब पत्नी ने कहा कि भाई कही प्राप्त नहीं हो सकता अतः इसे ही छोड़ियें।[56]

उपर्युक्त विवरण से परिणाम निकलता है कि स्त्रियाँ सामन्य उपभोग्य होती थी। जातकों में उल्लेख है कि स्त्रियाँ सतीत्व की रक्षा की।[57] थेरीगाथा में धन लेकर विवाह करने के अनेक उदाहरण मिलते हैं।[58] पालि त्रिपिटक के आधार पर नारी के लिए विवाह की अनिवार्यता पर बल देते हुए डॉ0 मदन मोहन सिंह ने वर्णन किया है कि तात्कालीन समाज में अविवाहित स्त्रियों के प्रति श्रद्धा की भावना थी।[59] चुल्लवग्ग[60] में एक वृद्ध माँ अपनी कन्या के विवाह के लिए आतुर रहती थी। डॉ0 मदन मोहन सिंह[61] ने बुद्ध कालीन समाज पर टिप्पणी करते है कि कन्या के लिए विवाह योग्य आयु सोलह वर्ष थी। स्वयंवर प्रथा भी प्रचलित थी।[62] विमलचन्द्र पाण्डेय के अनुसार बोद्ध मठों में स्त्रियों के प्रवेश होने के कारण अल्पायु में ही कन्या के विवाह की प्रथा को जन्म दिय होगा।[63] परन्तु बौद्ध साहित्य में वर्णित है कि युवती होने पर ही विवाह उत्तम माना जाता था और बीस वर्ष से अधिक आयु होने पर अविवाहित रहने पर कन्या स्वयं को भाग्यहीन पापिन मानती थी।[64] पी0वी0 काणे ने धर्मशास्त्र में वर्णन किया है कि लगभग ईसा पूर्व छठी शताब्दी से ईसा की प्रारम्भिक शताब्दी तक युवती होने के कुछ मांस इधर या उधर विवाह कर देना किसी समस्या की सूचक नहीं था।[65] बौद्ध जातकों में वर्णन है कि नारियाँ अपने से कम उम्र के व्यक्ति से विवाह कर लेती थी।[66] या अपने से अधिक उम्र या वृद्ध पुरुष के साथ विवाह कर लेती थी।[67] कन्याओं के अनेक गुण भी बताए गए हैं जैसे– सुन्दरी, हंस या गज की चाल वाली, कोमलांगी, बुद्धिमती आदि।[68] धानज्जानी ब्राह्मणी की बुद्ध धर्म एवं संघ के प्रति असीम श्रद्ध देखकर संगारव (तरुण ब्राह्मण) ने उसे दुत्कार दिया था, किन्तु वह भी अपने धार्मिक विश्वास से हटी नहीं।[69] राजा प्रसेनजित ने मल्लिका की बुद्ध धर्म एवं संघ के प्रति भक्ति देखकर उसको बहुत ताना मारा करता था परन्तु मल्लिका पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा और वह अपनी भक्ति में लीन रही।[70] अशोक की पुत्री संघमित्रा बौद्ध धर्म को प्रसारित करने के लिए श्रीलंका गयी।[71] जहाँ अनेक स्त्रियों को बौद्ध धर्म में दीक्षित किया। भिक्षुणी पटाचारा अपनी शिष्याओं को अक्सर यह सिखया करती थी कि बौद्ध धर्म को धारण करके पछताना नहीं पड़ेगा।[72] इससे स्पष्ट है कि बोद्ध काल में अनेक स्त्रियाँ एकाग्रचित होकर तभी नियमों का पालन की और स्वयं के प्रयास से उच्चज्ञान प्राप्त किया जिसके कारण वे 'थेरी' पद प्राप्त करने से समर्थ हुई।[73] विनय पिटक[74] भिक्खुनी पातिमोक्ख में भिक्षुणी द्वारा सूत कातने की बात लिखीं है जिससे स्पष्ट है कि शिक्षा के विषय धार्मिक और जीविका में सहायक होते थे। भिक्षुणियों को आध्यात्मिक ज्ञान के साथ–साथ लौकिक विषयों तथा शिल्पों की शिक्षा प्रदान करने की व्यवस्था की गयी थी।[75] बौद्ध काल में स्त्रियों का सम्पत्ति पर अधिकार स्वीकार किया जाता था इसके अनेक निर्देश बौद्ध साहित्य में विद्यमान है।[76] थेरीगाथा की एक कथा के अनुसार विशाखा भद्दीया श्रेणी मेण्डक का पौत्री तथा धनंजय की पुत्री का विवाह श्रावस्ती के श्रेष्ठी से करने पर, आपार धन खर्च किया।[77] विशाखा बौद्ध धर्म को मानने वाली थी उसने श्रावस्ती के बौद्ध संघ के लिए 'पूर्वाराम' नामक बिहार का निर्माण कराया था जिसके लिए उसने अपनी सम्पत्ति से उन्नतीत करोड़ मुद्राएँ खर्च की थी।[78] कौटिल्य के अनुसार जिस सम्पत्ति का कोई उत्तराधिकारी न हो उसे राजा ले, किन्तु स्त्री के जीवन निर्वाह और श्राद्ध कार्यों के लिए उसे अवश्य धन दे।[79] इससे स्पष्ट होता है कि पुत्रहीन विधना अपने पति की सम्पत्ति की स्वामिनी नहीं हेाती थी। कौटिल्य ने भी पुत्री के प्रति सदाशयता प्रदर्शित करते हुए अभ्रातृ कन्या को उत्तराधिकारी माना है, चाहे उसे कम ही हिस्सा क्यों न मिले।[80] कौटिल्य ने भी पिता की सम्पति में पुत्री के अधिकार को स्वीकार किया है।[81] श्री काशी प्रसाद जायसवाल ने विवेचन किया है कि जब स्त्रियाँ भिक्षु व्रत ग्रहण कर भिक्षणुी संघ में प्रवेश पा सकती हैं भिक्षुओं के समान ही समाज के हित, कल्याण के लिए अपनी शक्ति को लगा सकती थी तो उन्हें सम्पत्ति के अधिकार से वंचित रखना किसी भी प्रकार युक्तिसंगत नहीं था।[82]

वस्तुतः बौद्ध काल तक स्त्रियों की स्थिति में अवनति होती रही है। उत्तर–वैदिक काल के बाद से स्त्रियों को उपनयन संस्कार से वंचित कर विवाह को ही स्त्रियों का उपनयन संस्कार निर्धारण हुआ। अतः सम्पूर्ण स्त्रियों को यज्ञ एवं शिक्षा से पुर्णरूपेण वंचित हो गयी। स्त्रियों पर पुरुष का सम्पूर्ण नियन्त्रण स्थापित हुआ। जिसके कारण समाज में स्त्रियों की स्थिति शूद्र से भी ज्यादा दयनीय हो गयी।

इस प्रकार प्राचीन भारतीय समाज में स्त्रियों की स्थिति का मूल्यांकन करने से प्रतीत होता है कि जितना अधिकार और सम्मान मिलना चाहिए उन्हें नहीं प्राप्त हुआ। सभ्यता के आरम्भिक काल से वैदिक काल तक सामाजिक दृष्टिकोण से स्त्रियाँ पुरुषों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण स्थान निर्धारित करती प्रतीत होती हैं। परन्तु उत्तरवैदिक काल के उपरान्त क्रमशः उनके पूर्ववर्ती अधिकारों पर प्रतिबन्ध एवं उनके सामाजिक सम्मान में ह्रास दृष्टिगत होता है। नित्य पर नियम एवं अधिकारहीनता की प्रताड़ना के उपरान्त बौद्ध काल में उन्हें पुनः अपनी स्थिति को अपने द्वारा निर्धारित करने का अवसर प्राप्त हुआ। परन्तु सामाजिक व्यवस्था की जटिलता ने उन्हें मानसिक रूप से जकड़ रखा था। स्त्रियों के अधिकांशतः विवरण राजकीय व्यवस्था से सम्बद्ध एवं राजकीय कुल के प्राप्त होते हैं। अगर इनकी सामाजिक स्थिति में इतने प्रतिबन्ध न थे तो सामान्य महिलाओं की स्थिति और भी दयनीय रही होगी, जो दासी और वेश्या जैसे प्रचलित शब्दों एवं उनके कार्यों से दृष्टिगत होता है।

**सन्दर्भ सूची :–**


1. विमलकीर्ति : थेरीगाथा, अनु0 एवं सम्पा0, द्वितीय संस्करण, सम्यक् प्रकाशन, 2006, पृ0–12–13
2. विद्यालंकार, सत्यकेतु : प्राचीन भारत का धार्मिक, सामाजिक और आर्थिक जीवन, श्री सरस्वती सदन, नई दिल्ली, 2007, पृ0–208
3. जैन, प्रतिभा एवं संगीता शर्मा : भारतीय स्त्री : सांस्कृतिक सन्दर्भ, विवेक प्रकाशन मेरठ, पृ0–77
4. चतुरसेन, आचार्य : बुद्ध और बौद्धधर्म, भारतीय प्रकाशन, लखनऊ, 1964, पृ0–98
5. सांस्कृत्यायन, राहुल : दीर्घनिकाय : हिन्दी अनुवाद, सारनाथ, वाराणसी, 1936, पृ0 141
6. चतुरसेन, आचार्य : पूर्वोक्त, पृ0 96
7. वही, पृ0 97
8. सं0नि0, 44/1 (खेमासुक्त)
9. थेरी, पद्य 107 और आगे, श्रीमती रीस डेविड्स, सिस्टर्स, गाथा 46, मलालशेखर, डिक्शनरी, भाग–2, पृ0–255–257
10. जातक, 6/25
11. जे0आई0एच., भाग–32, पृ0–03
12. कश्यप, जगदीश, चुल्लवग्ग, नवनालन्दा महाविहार, 1956, पृ0–373
13. थेरीगाथा, प्रशासकीय, पृ0–4
14. तेसकुण जातक, 5/521, पृ0–1981 (संयुक्त निकाय)
15. जातक, 301
16. संयुक्त निकाय, 1/4/6
17. असातमत्त जातक, 1/61, पृ0–3791
18. दीर्घ निकाय, 2/2461
19. रूद्रावणावदान, पृ0–4961

20. हार्नर, विमेन अण्डर प्रिमिटिव बुद्धिज्म, दिल्ली, दुसरा अध्याय।
21. जे0आई0 एच, भाग–32, पृ0–31
22. जातक प्रथम, पृ0–195
23. जातक षष्ठ, गा 2250–60, पृ0 561–631
24. जातक तृतीय, पृ0–2831
25. थेरी, पद, 107 और आगे, श्रीमती रीस डेविड्स, सिस्टर्स, गाथा 46, मलालशेखर, भाग 2, पृ0 255–257
26. संयुक्त निकाय, 12/20
27. विद्यालंकार, सत्यकेतु, पूर्वोक्त, 2007, पृ0–209
28. जातक षष्ठम्, पृ0–368–369
29. रुद्रायणावदान, पृ0–470
30. विनयपिटके, महावग्कपति, प्रधान सशोधक, भिक्षु जगदीसकस्सपो नव–नालन्दा महाविहारेन, 1980, 5/59, महावग्ग भिक्खु जगदीश काश्यप (अनु0) नालन्दा देवनागरी पालिग्रन्थ माला, बिहार, 1956, 4/4/5
31. सांकृत्यायन, राहुल : विनयपिटक (हिन्दी अनुवाद) सारनाथ, वाराणसी, 1935, 4/69, अवदानशतक, 2/86/2, 7/2/162/4
32. महावस्तु, 2/225/2, सौन्दरानन्द, 18/20
33. अवदानशतक, 2/51/7, लाल, अंगने : संस्कृत बौद्ध साहित्य में इतिहास और संस्कृति, लखनऊ, 2006, पृ0–245
34. अष्टाध्यायी, 6/2/86 'छात्र्यादय शालायाम्।'
35. वहीं, 4/1/59, 3/3/21
36. मेहता, रतिलाल, एन0 श्री बुद्धिष्ट इण्डिया, 1939, पृ0 277
37. भावलकर, बनमाला : महाभारत में नारी, पृ0 451
38. जातक तृतीय, गा0 22–32, पृ0सं0–4381
39. थेरीगाथा, पृ0–631
40. सिंह, डॉ0 मदन मोहन : बुद्धकालीन समाज और धर्म, बिहार हिन्दी अकादमी, पटना, 1972, पृ0–92–93
41. अल्तेकर, ए0एस0 : द पोजीशन ऑफ द वीमेन इन इण्डियन सिविलाइजेशन, मोतीलाली बनारसीदास, दिल्ली, पृ०सं०–16
42. थेरीगाथा, पृ०सं०–238
43. संयुक्त निकाय, 3/16 (मल्लिका सुत्त)
44. वि.चु., 10/17
45. दी.नि., अग्गञ्ज सुत्त।'
46. अ.नि० 7/6/10 (भरिया सुत्त)
47. जातक 267 की निदान कथा
48. जातक 5/682 फासबोल जातक
49. जातक 546
50. जातक 55
51. जातक 267
52. थेरी गाथा टीका, पृ०–260 'इद्धि दासी के दो विवाह हुए थे।'

53. कण्डिन जातक सं० 13 'धिक्त्थुनं' जनपद यत्थिथीपरिनायिका ते चापि धिक्किता सत्ता ये इत्थनिं वसं गता।'
54. अनभिरत जातक संख्या–65
55. जातक संख्या–168
56. उच्छग जातक संख्या–67
57. अवदान कल्पलता
58. थेरी गाथा 120/153
59. सिंह, डॉ0 मदन मोहन, पूर्वोक्त, पृ०–40
60. चुल्लवग्ग, 5/3/32
61. सिंह, डॉ0 मदन मोहन : पूर्वोक्त, पृ०–48
62. पाण्डेय, विमलचन्द्र : भारत वर्ष का सामाजिक इतिहास, हिन्दुस्तान एकेडमी, इलाहाबाद, 1960, पृ०–399
63. वही
64. जातक चतुर्थ, गा 134, पृ०–76
65. काणे, पी.वी. : पूर्वोक्त, पृ०–275
66. जातक तृतीय, पृ०–393
67. जातक तृतीय, पृ०–342–43, प्रथम पृ०–225
68. काणे, पी.वी., पूर्वोक्त, पृ०–273
69. मज्झिमनिकाय, 2/482–483
70. मज्झिमनिकाय, 2/354
71. सिंह, उर्मिला प्रकाश, प्राचीन भारत में नारी, मध्य प्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल 1987, पृ०सं०–3
72. उपाध्याय, भरत सिंह : बौद्ध दर्शन तथा अन्य भारतीय दर्शन (भाग–2), कलकत्ता, संवत् 2011, पृ०सं०–368
73. सिंह उर्मिला प्रकाश : पूर्वोक्त, पृ०–3
74. विनय पिटक, 4/22
75. सिंह मदन मोहन : पूर्वोक्त, पृ०–91
76. विद्यालंकार, सत्यकेतु : पूर्वोक्त, पृ०–216/217/218
77. थेरीगाथा
78. थेरीगाथा
79. अर्थशास्त्र, 3/5
80. अर्थशास्त्र, 3/5 द्रव्यम् पुत्रस्य सौदर्या भ्रातरः सहजीविनो वा हरेयुः कन्याश्च।'
81. वही, पृ०–3/5
82. विद्यालंकार, सत्यकेतु : पूर्वोक्त, पृ०–218